मछली के साथ सिंघाड़े की समन्वित खेती

अभिषेक कुमार[1], विवेक कुमार[1], अभिमान[1], पंकज कुमार[2] और **सुष्मिता रानी[3]**

"देश की बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण और औद्योगिकीकरण के कारण जल और भूमि जैसे कृषि संसाधन लगातार सीमित होते जा रहे हैं और प्रदूषण की चुनौती भी बढ़ रही है। देश की लगभग आधी आबादी गरीबी रेखा से नीचे जीवनयापन कर रही है, जिन्हें प्रोटीनयुक्त पोषक आहार के साथ-साथ रोजगार के बेहतर अवसरों की भी आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में अधिकांश किसानों के पास भूमि कम होने और छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित होने के कारण एकल कृषि प्रणाली अब आर्थिक दृष्टि से लाभकारी नहीं रही। इस स्थिति में ऐसी नीतियों और तकनीकों की आवश्यकता है, जो कम पूंजी निवेश के साथ अधिक उत्पादन और अधिक रोजगार सृजन की क्षमता प्रदान करें तथा उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग सुनिश्चित करते हुए पर्यावरण संतुलन भी बनाए रखें। इस दिशा में मत्स्य पालन के साथ सिंघाड़े की समन्वित खेती एक उपयोगी और व्यावहारिक मॉडल साबित हो सकती है। यह प्रणाली सीमित जलभूमि संसाधनों का कुशल उपयोग कर किसानों को आर्थिक स्थिरता प्रदान करने के साथ-साथ ग्रामीण स्तर पर पोषण उपलब्धता और पर्यावरण अनुकूल कृषि को बढ़ावा देने में सहायक साबित हो सकती है।"

सिंघाड़ा एक मौसमी जलीय नकदी फसल है, जिसे पानी फल या एक्वाचेस्टनट के नाम से भी जाना जाता है। इसका उत्पादन भारत में विशेष रूप से पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, नेपाल के तराई क्षेत्रों, पाकिस्तान और दक्षिण एशिया सहित विश्व के अनेक देशों में किया जाता है। यह ट्रैपिएसी परिवार का एक जलीय पौधा है और इसका वैज्ञानिक नाम ट्रापा है। भारत में मुख्यत: इसकी दो प्रजातियां प्रचलित हैं:

- दो सींग या कांटे वाली प्रजाति (ट्रापा बाइस्पिनोसा)
- चार सींग या कांटे वाली प्रजाति (ट्रापा क्वाड्रिस्पिनोसा)

[1]सहायक प्राध्यापक, जलकृषि विभाग; [2]सहायक प्राध्यापक, जलीय जीव स्वास्थ्य प्रबंधन विभाग; [3]सहायक प्राध्यापक, मत्स्य कायिकी एवं जीव रसायन विभाग, महाविद्यालय, अर्राबाड़ी, किशनगंज

सिंघाड़े का उपयोग मुख्य रूप से खाद्य में किया जाता है। भारतीय आहार घी में तला हुआ सिंघाड़ा एक स्वादिष्ट व्यंजन माना जाता है। इसके अलावा इसकी सब्जी और हलवा भी लोकप्रिय हैं। सिंघाड़े में लगभग 4.7 प्रतिशत प्रोटीन, 23.3 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.3 प्रतिशत वसा, 0.02 प्रतिशत कैल्शियम, 0.15 प्रतिशत फॉस्फोरस और लगभग 70 प्रतिशत नमी पाई जाती है। पौष्टिक और गुणवत्तापूर्ण होने के कारण इसका खाद्य महत्व अत्यधिक है। इसकी गुणवत्ता किसी भी अन्य खाद्य उत्पाद से कम नहीं आंकी जा सकती।

भारत में सिंघाड़े की खेती पारंपरिक रूप से लंबे समय से की जाती रही है। सामान्यत: तालाबों में इसकी खेती मोनोकल्चर पद्धति से की जाती है, जिससे किसानों को सीमित आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। यदि मत्स्य के साथ सिंघाड़े की समन्वित खेती अपनाई जाए, तो एक ही तालाब से मत्स्य और सिंघाड़े का उत्पादन प्राप्त कर किसानों की आय को दोगुना किया जा सकता है। यह प्रणाली संसाधनों के बेहतर उपयोग के साथ-साथ अधिक लाभ सुनिश्चित करने का एक प्रभावी मॉडल बन सकती है।

तालाब का चयन

रेतीली और चट्टानी मृदा वाले तालाबों को छोड़कर, गांवों में स्थित सभी कीचड़युक्त मृदा वाले तालाब सिंघाड़े की खेती के लिए उपयुक्त होते हैं। इसके अलावा सड़क और रेलवे लाइन के किनारे मौजूद ऐसे गड्ढे, जिनमें वर्षा के बाद 6 से 8 महीनों तक पानी भरा रहता है, का भी उपयोग किया जा सकता है। औसतन 1.0 से 1.5 मीटर गहराई वाले तालाब सिंघाड़े खेती के लिए अधिक अनुकूल माने जाते हैं। मौसमी तालाबों की तुलना में बारहमासी तालाब, जिनमें पूरे वर्ष

मत्स्य आहार प्रबंधन

सिंघाड़े की फसल की कटाई के बाद मछलियों की बेहतर और तेज वृद्धि के लिए कृत्रिम पूरक आहार दिया जाता है। इसमें धान की ब्रान, सरसों की खली, सोयाबीन मील, फिश मील और मिनरल मिक्सचर को 40:40:15:4.7:0.3 के अनुपात में मिलाकर तैयार किया जाता है। इस मिश्रित आहार को आमतौर पर तालाब में संचय की गई मछलियों के कुल वजन के 3 से 5 प्रतिशत की दर से प्रतिदिन खिलाया जाता है। इसके विकल्प के रूप में धान की कनकी और मुर्गी दाना को 3:1 के अनुपात में भी उपयोग में लाया जा सकता है। आहार को प्लास्टिक के बोरे में छोटे छिद्र बनाकर या किसी चौड़े बर्तन अथवा टोकरी में रखकर तालाब में देना अधिक उपयोगी होता है।

जल उपलब्ध रहता है, अधिक उपयुक्त और स्थिर उत्पादन देने वाले होते हैं।

तालाब की तैयारी

सिंघाड़े की सफल खेती के लिए तालाब की सफाई आवश्यक है। तालाब को सभी प्रकार की जलीय वनस्पतियों और जलीय जीवों से मुक्त रखना चाहिए। सिंघाड़ा पूरी सतह पर फैल जाने के कारण जल में सूर्य का प्रकाश पहुंचने में बाधा उत्पन्न करता है। इससे जल में ऑक्सीजन की मात्रा तथा मछलियों के प्राकृतिक आहार, विशेषकर प्लवकों का स्तर कम हो सकता है।

संतुलन बनाए रखने के लिए तालाब में कुछ तकनीकी उपाय अपनाने चाहिए। तालाब के बीच या किनारे की ओर कुछ हिस्सों को बांस या रस्सी से घेरकर खुला छोड़ देना चाहिए, ताकि इन घेरों के अंदर सिंघाड़ा न फैल सके और प्रकाश तथा वायु संचार बना रहे। तालाब में यदि जल भरने और निकालने की व्यवस्था हो, तो यह और भी लाभकारी

सिंघाड़े की स्वस्थ उपज

होता है। जल के प्रवेश और निकास द्वार पर तार या नायलॉन की मजबूत जाली लगाना जरूरी है। इससे अवांछित जलीय जीव तालाब प्रणाली में प्रवेश न कर सकें और समन्वित खेती बाधारहित संचालित हो सके।

सिंघाड़े लगाने की विधि

सिंघाड़े लगाने की प्रक्रिया बीज प्रबंधन से शुरू होती है। जनवरी में परिपक्व फल को मिट्टी के घड़े या बैरल में रखकर उसमें पानी भर दिया जाता है। घड़े को छायादार और नमी वाले स्थान पर लगभग एक महीने तक रखा जाता है। घड़े में पानी भरने के बाद बीज को 2 से 3 दिनों तक स्थिर जल में रखा जाता है। इसके बाद 5 से 6 दिनों तक पानी को प्रतिदिन बदलना आवश्यक होता है। इस दौरान यह विशेष ध्यान रखना चाहिए कि बीज सूखने न पाए। यह क्रिया तब तक दोहराई जाती है, जब तक बीज की ऊपरी सतह सड़ने न लगे। इसके बाद बीज का अंकुरण प्रारंभ हो जाता है।

नर्सरी तालाब

जैसे ही बीज का अंकुरण शुरू हो जाता है, उसे घड़े से निकालकर नर्सरी तालाब, पोखर या छोटे गड्ढों में स्थानांतरित किया जाता है, जहां लगभग डेढ़ से दो फीट पानी भरा रहता हो। सामान्यत: अंकुरित बीज को मार्च या अप्रैल में नर्सरी में डाला जाता है। अंकुरित बीज जलाशय की तली में कीचड़ के भीतर बैठ जाते हैं, जहां से जड़ और तने का विकास शुरू होता है।

सिंघाड़े का तना ऊपर की ओर बढ़ता है और उससे निकलने वाली पत्तियां कुछ समय बाद जल सतह पर आ जाती हैं। इसके साथ ही पौधे की तनों की गांठों से धीरे-धीरे नए पौधे भी विकसित होने लगते हैं। यही विकसित भाग पुन: तली की मृदा अथवा कीचड़ से संपर्क बनाकर जड़ पकड़ लेते हैं। इस तरह एक ही पौधे से अनेक नए पौधे तैयार हो जाते हैं, जिससे रोपण सामग्री की उपलब्धता बढ़ती है और तालाब में सिंघाड़ा फैलाव सघन होता जाता है।

प्रतिरोपण

जून-जुलाई में सिंघाड़े के पौधों को नर्सरी तालाब या पोखरों से निकालकर बड़े तालाबों में प्रतिरोपित किया जाता है। पौधे से पौधे की दूरी तालाब की मृदा की उर्वरता पर निर्भर करती है, फिर भी 80 से 120 सें.मी. की दूरी सामान्यत: उपयुक्त मानी जाती है। एक हैक्टर जल क्षेत्र वाला नर्सरी तालाब लगभग 8 से 10 हैक्टर जल क्षेत्र के लिए पर्याप्त संख्या में स्वस्थ पौधे प्रदान कर सकता है।

सिंघाड़ा-मछली समन्वित प्रणाली

इसके अलावा बीज रोपण का एक पारंपरिक तरीका भी प्रचलित है, जिसमें परिपक्व बीज को सीधे बड़े तालाब में डाल दिया जाता है या मौसम समाप्त होने पर फल स्वयं पानी में गिरकर कीचड़ में गहराई तक बैठ जाते हैं। इन बीजों से अप्रैल-मई में नए पौधे प्राकृतिक रूप से विकसित होने लगते हैं, जिन्हें आगे अन्य जलाशयों में प्रतिरोपित किया जा सकता है।

तालाबों में यदि पौधों की संख्या अधिक हो जाए, तो अवांछित तनों और पत्तियों की कटाई-छंटाई समय-समय पर करना आवश्यक होता है। ऐसा न करने पर उत्पादन की गुणवत्ता और पैदावार प्रभावित हो सकती है।

मत्स्य बीज दर

तालाब में सिंघाड़ा की सतह पर सघन फैलाव की स्थिति में मध्य और तलीय परत में रहने वाली कार्प मछलियां उपयोगी रहती हैं। एक हैक्टर जल क्षेत्र में केवल कार्प आधारित सिंघाड़ा उत्पादन के लिए लगभग 5000 अंगुलिकाओं का संचय किया जा

मत्स्यपालन का योगदान

देश की अर्थव्यवस्था में मत्स्य पालन व्यवसाय की महत्वपूर्ण भूमिका है। सकल राष्ट्रीय उत्पादन में मत्स्य क्षेत्र का योगदान लगभग 0.9 प्रतिशत है, जबकि कृषि क्षेत्र का योगदान 4.7 प्रतिशत है। मत्स्य उत्पादन में भारत विश्व में तीसरे स्थान पर है और अंत:स्थलीय जलकृषि में दूसरे स्थान पर है। वर्तमान में देश का कुल मत्स्य उत्पादन लगभग 10.79 मिलियन टन है, जिसमें 3.4 मिलियन टन उत्पादन अंत:स्थलीय जलीय संसाधनों से तथा 3.0 मिलियन टन समुद्री जल संसाधनों से प्राप्त होता है। देश में मछली की प्रति व्यक्ति औसत वार्षिक खपत 9.0 कि.ग्रा. है, जो विश्व के औसत 15.0 कि.ग्रा. से कम है। राष्ट्रीय विकास, पोषण सुरक्षा और रोजगार सृजन में मत्स्य पालन की भूमिका आने वाले वर्षों में और अधिक सशक्त रूप में उभरने वाली है।

मत्स्य किस्म

सिंघाड़ा तालाब की जल सतह पर पूरी तरह फैला रहता है, इसलिए ऐसी कार्प मछलियों का चयन किया जाता है, जो तालाब के मध्य और तलीय क्षेत्र में रहना तथा आहार ग्रहण करना पसंद करती हैं। इस प्रणाली में प्रमुख रूप से रोहू और मृगल का चयन उपयुक्त माना जाता है। रोहू मुख्यत: तालाब में उगने वाली काई और सतह के भीतर मौजूद पेरीफाइटॉन का सेवन करती है, जबकि मृगल तालाब की तली में उपलब्ध सड़े-गले जैविक पदार्थों और कीटों को आहार के रूप में ग्रहण करती है। इसके अतिरिक्त, विशेष रूप से छोटे और मौसमी तालाबों में वायुश्वासी मछलियों का पालन भी उपयोगी विकल्प के रूप में अपनाया जा सकता है। इनमें मांगुर, सिंधी, कवई जैसी मछलियां शामिल हैं, जो तालाब के तलीय क्षेत्र में रहना और आहार करना पसंद करती हैं तथा कम ऑक्सीजन वाले जल में जीवित रहने के लिए अनुकूलित होती हैं। इन वायुश्वासी मछलियों के शरीर में अतिरिक्त श्वसन अंग पाए जाते हैं, जिनकी सहायता से ये जल में घुलित ऑक्सीजन के अलावा प्रत्यक्ष रूप से वायुमंडलीय ऑक्सीजन का भी उपयोग कर सकती हैं। मौसमी तालाबों में जल स्तर घटने या तालाब सूखने की स्थिति में इन्हें आसानी से पकड़ा भी जा सकता है।

सकता है। इस मॉडल में सामान्यत: वायुश्वासी मछलियां अधिक उपयुक्त रहती है, क्योंकि ये तली में रहकर आहार ग्रहण करती है।

छोटे और मौसमी तालाबों में सिंघाड़ा के साथ वायुश्वासी मछलियों का संचय लाभकारी होता है। इन मछलियों का संचय लगभग 25,000 प्रति हैक्टर की दर से किया जा सकता है। इनके साथ कॉमन कार्प मछलियों का पालन भी संभव है। संचय के समय कॉमन कार्प के शिशुमीन की लंबाई 10 सें.मी. से अधिक रखना सुरक्षित होता है, अन्यथा वायुश्वासी प्रजातियां छोटी कार्प को हानि पहुंचाती हैं।

दोहरे लाभ से भरपूर प्रणाली

सिंघाड़े कटाई के बाद मत्स्य पालन अप्रैल-मई तक जारी रखने से मछलियां 8-10 महीने में ये बाजार आकार प्राप्त कर लेती हैं। संचय में एक समान और स्वस्थ अंगुलिकाओं का चयन करना अनिवार्य है। आकार में अधिक अंतर होने पर बड़ी मछलियां छोटी को नुकसान पहुंचा सकती हैं।

आहार प्रबंधन

इन तालाबों में पहले से ही जैविक पदार्थों की मात्रा अधिक होती है। वायुश्वासी मछलियों के पालन में अतिरिक्त जैविक या रासायनिक खाद देने की आवश्यकता नहीं होती। ये कम ऑक्सीजन और उपलब्ध प्राकृतिक पोषण में भी अच्छी वृद्धि करती हैं।

सिंघाड़ा के साथ कार्प मछलियों की समन्वित खेती में एक हैक्टर जल क्षेत्र के लिए लगभग 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फेट और 60 कि.ग्रा. पोटाश का उपयोग किया जा सकता है। उर्वरक की यह

सिंघाड़ा किस्में

उत्पादन के लिए साधारणत: दो सींग या कांटे वाली किस्म का उपयोग अधिक किया जाता है। सिंघाड़े की कई प्रजातियां पाई जाती हैं, लेकिन भारत में मुख्य रूप से चार किस्में अधिक प्रचलित हैं:

- कानपुर
- पटना
- देसी छोटा
- देसी बड़ा

इन किस्मों का नामकरण उनकी उत्पत्ति के स्थान और फल के आकार के आधार पर किया गया है। उपरोक्त में से कानपुर और पटना प्रजाति के फल स्वाद की दृष्टि से श्रेष्ठ माने जाते हैं। इनका गूदा मुलायम, मीठा और अधिक स्वादिष्ट होता है, जिस कारण इनकी बाजार में मांग भी अपेक्षाकृत अधिक रहती है। सिंघाड़े की उपयुक्त किस्म का चयन किसानों को बेहतर उत्पादन और अधिक बिक्री मूल्य प्राप्त करने में सहायक हो सकता है।

ग्रामीण क्षेत्रों में आयवर्धक तकनीक

मात्रा दो किश्तों में दी जाती है: पहली किश्त प्रतिरोपण के 20 दिनों बाद और दूसरी किश्त पहली किश्त के 15 दिनों बाद। इससे तालाब में पोषक तत्व संतुलित रहते हैं और सिंघाड़ा तथा मछलियों की वृद्धि पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

सिंघाड़ा एवं मत्स्य की निकासी

सिंघाड़ा फलों की निकासी सितंबर-अक्टूबर में शुरू होती है और यह दिसंबर-जनवरी तक जारी रहती है। बेहतर गुणवत्ता और निरंतर उत्पादन सुनिश्चित करने के लिए 8 से 10 दिनों के अंतराल पर फलों की निकासी करते रहना उपयुक्त माना जाता है। एक हैक्टर जल क्षेत्र में सिंघाड़े का सामान्य औसत उत्पादन 8 से 10 टन प्रति वर्ष तक प्राप्त होता है, जबकि अधिक उपजाऊ और पोषक कीचड़ वाली मृदा वाले तालाबों में यह 15 टन प्रति हैक्टर तक पहुंच सकता है।

सिंघाड़े के साथ समन्वित खेती में यदि वायुश्वासी मछलियां पाली जाएं, तो सामान्यत: औसत वार्षिक उत्पादन 1000 से 1200 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से प्राप्त किया जा सकता है।

मछलियों की निकासी मई-जून तक कर लेना बेहतर होता है, क्योंकि 8 से 10 महीनों की पालन अवधि में ये बाजार में बिक्री योग्य आकार तक विकसित हो जाती हैं। कार्प मछलियों की निकासी जाल द्वारा आसानी से की जा सकती है। वायुश्वासी मछलियों की पूर्ण निकासी के लिए तालाब का पानी पूरी तरह निकालना आवश्यक होता है। जाल से छेड़छाड़ होने पर ये तालाब की कीचड़ परत में गहराई तक घुस जाती हैं और जल मौजूद रहने पर इन्हें पकड़ना कठिन हो जाता है।

समुचित समय पर निकासी, उपयुक्त आहार प्रबंधन और जल स्तर का सही नियंत्रण इस समन्वित तालाब प्रणाली को अधिक लाभकारी और प्रबंधन में सरल बनाते हैं। ■